वार्षिक सदस्यता शुल्क - रु. २५/-

NOVEMBER-2024

स्वानुभूतिप्रकाश

प्रकाशक :
श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट
भावनगर - ३६४ ००१.

परम कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजीकी जन्मजयंती (कार्तिक पूर्णिमा)के मंगल अवसर पर उनके चरणोंमें कोटि कोटि वंदन!!!

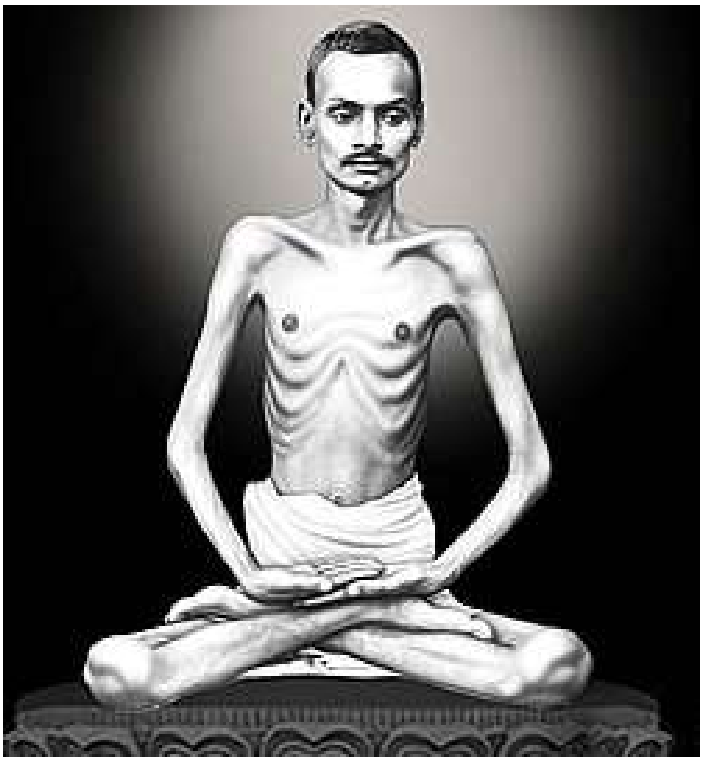

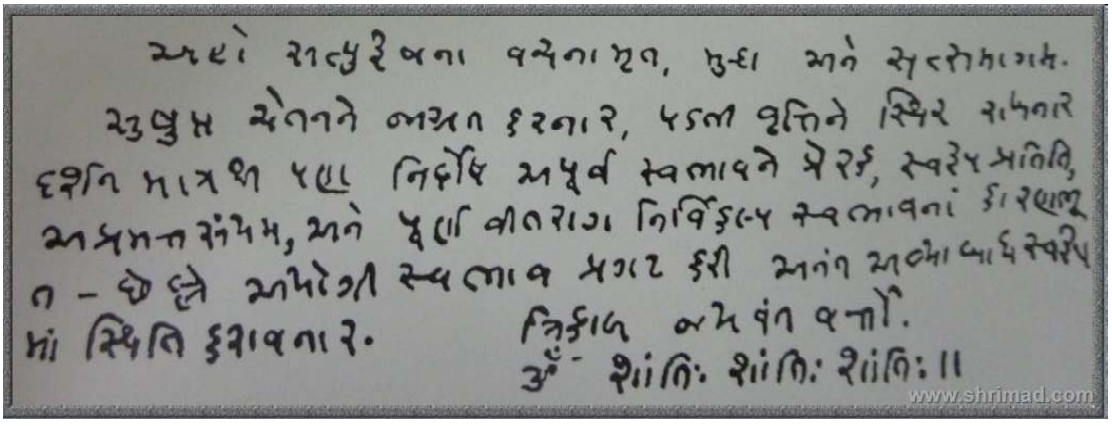

परम कृपालुदेवके मंगल हस्ताक्षर

स्वानुभूतिप्रकाश

वीर संवत्-२५५१, अंक-३२३, वर्ष-२६, नवम्बर-२०२४

परम कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजी प्रति पूज्य गुरुदेवश्रीके हृदयोद्गार

अनंतकाल से आत्मा के नाम से स्वच्छंद एवं मताग्रह से बाहर का सब कुछ किया है, अतः श्रीमद् ने निष्कारण करुणा से आत्मार्थी जीवों के हित के लिये आत्मसिद्धि शास्त्र की रचना की है। (पृष्ठ संख्या-५१)

*

श्रीमद्जी को वर्तमान में कोई गुरु नहीं थे; पूर्वभव के संस्कार थे। वे कहते थे कि :- अहो! वह हृदय, वह एकांत स्थल, सत्पुरुषों के वृंद, सत्समागम और वह निवृत्ति के स्थान, ज्ञानी के विहार (विचरण) के स्थान! उनको धन्य है। प्रवृत्ति में रहते हुए भी उनको ये सब बारंबार याद आ जाता था।

वे दुकान में नहीं बैठे थे, किन्तु आत्मा में (ज्ञान में) बैठे थे। उन्हें अपने हृदय में सत्समागम का महत् बहुमान था। (पृष्ठ संख्या-६३)

*

सच्चा अध्यात्म क्या है? सौराष्ट्र में इसे यथार्थ समझानेवाले यदि कोई हैं तो वे वर्तमानकाल में श्रीमद् राजचंद्र थे। ...श्रीमद्जी का विशाल हृदय व उज्ज्वल अंतःकरण जो समझना चाहता है उसे (पहले) अपने अंदर पात्रता प्रगट करनी होगी। (पृष्ठ संख्या-७६)

*

श्रीमद्जी ने स्वयं ही शिष्य की जिज्ञासा की हूबहू रचना की है, और हृदय में आरपार उत्तर जाय ऐसी हृदयवेधक भाषा में संवाद की रचना की है। (पृष्ठ संख्या-२४६)

*

श्रीमद्जी ने ऐसी अपूर्व घटना की रचना की है कि उसमें कोई अंग बाकी न रह जाय। इस प्रकार संक्षेप में सत् तत्त्व को जाहिर किया है। अनंत काल में अज्ञानभाव से जो भटकना हुआ, उस अज्ञानभावरूप मूल का छेदन जिस भाव से किया, उस भाव से सद्गुरु को नमस्कार करके मांगलिक किया है। गुजरात-सौराष्ट्र

में आत्मतत्त्व की ऐसी स्पष्ट बात गुजराती भाषा में करके, अध्यात्मशास्त्र बनाया, इससे भव्य जीवों पर बहुत उपकार हुआ है। हजारों जीव उस कृपा-प्रसाद से आत्मशांति की भावना भाते हैं। श्रीमद्जी ने बालवय में पूर्वजन्म के बलवान संस्कार द्वारा आत्मा की गुंजार जाहिर की है। उनका जीवनचरित्र बहुत उत्कृष्ट था। 'आत्मसिद्धि' में अध्यात्मतत्त्व का बहुत गहरा रहस्य भरा है। (पृष्ठ संख्या-२९०)

*

उन समर्थ पवित्र आत्मा की (श्रीमद्जी की) देह की स्पर्शना इस भूमि से हुई है। वे अनंत भव का अभाव कर गये हैं। वह अपूर्व भाव कैसा होगा कि जिस भाव से अनंत भाव का अभाव होकर एक ही भव के बाद मोक्ष जानेवाले हैं? (पृष्ठ संख्या-२९३)

*

जो बात (आत्मस्वरूप का सच्चा न्याय) अनंत ज्ञानी सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा कह गये हैं वही बात श्रीमद्राजचंद्रजी भी कह गये हैं। (पृष्ठ संख्या-३४१)

*

श्रीमद् राजचंद्रजी जवाहरात की दुकान पर बैठे हुए दिख रहे थे फिर भी हर पल मोक्ष के निकट जा रहे थे। लोग बाहर से देखे तो अन्य कुछ दिखे। गृहस्थवेष में ज्ञानी को पहिचानना बाह्यदृष्टि जीवों को मुश्किल पड़ता है। (पृष्ठ संख्या-३४५)

*

जिन्होंने इस पंचमकाल में सत्धर्म की घोषणा की, और खुद ने अनंत भव का अंत करके, एक ही भव बाकी रहे ऐसी पवित्र दशा आत्मा में प्रगट की, ऐसे पवित्र पुरुष का अति-अति बहुमान होना चाहिए। उनके जन्मदिन की आज जयंति है, धन्य है उनको! मैं निश्चितरूप से कहता हूँ कि गुजरात-काठियावाड में (सौराष्ट्र में) वर्तमान काल में मुमुक्षु जीव को परम उपकारी कोई हैं, तो वे श्रीमद् राजचंद्रजी हैं। गुजराती भाषा में 'आत्मसिद्धि' लिखकर जैनशासन की शोभा में अभिवृद्धि की है। इस काल में उनके समान महत्-पुरुष मैंने देखे नहीं हैं। उनके एक-एक वचन में गहरा रहस्य है। वह सत्समागम के बिना समझ में आये ऐसा नहीं है। (पृष्ठ संख्या-४६८)

*

श्रीमद्जी का जीवन समझने के लिये मताग्रह से - दुराग्रह से दूर रहकर, उनके पवित्र जीवन को मध्यस्थतापूर्वक देखना चाहिए, ज्ञानी की विशाल दृष्टि के न्याय से सोचना चाहिए। उनकी भाषा में अपूर्व भाव भरे हैं, उसमें वैराग्य, उपशम, विवेक, सत्समागम सब कुछ हैं। बालक से लेकर आध्यात्मिक सत्स्वरूप की पराकाष्ठा तक की पहुँचवाले अत्यंत गहन न्याय, गंभीर अर्थ उनके लेख में हैं। ...उनके अंतर में वीतराग शासन की प्रभावना हो, सनातन जैनधर्म जयवंत रहे, इसके लिये निमित्त होने की भावना अंतर की गहराई में थी। (पृष्ठ संख्या-४६९)

*

आजकल श्री समयसारजी परमागमशास्त्र पढ़ा जा रहा है, उसकी प्रभावना करनेवाले भी श्रीमद् राजचंद्रजी थे, अपनी मौजूदगी में ही उन्होंने परमश्रुत प्रभावक मंडल की स्थापना की। उनका उद्देश्य, महान आचार्यों के आगम-शास्त्र संशोधित करके छपवाने का था। उस मंडल ने उन्तीस वर्ष पूर्व, एक हज़ार समयसारजी शास्त्र - आचार्यवर कुंदकुंदभगवान रचित महासूत्र छपवाये। वह शास्त्र (हस्तलिखित) जब सर्व प्रथम (लींबडी नगर में) उनके हाथ में आया, तब दो पृष्ठ पलटते ही रुपयों से भरी थाली मँगवाई, जिस प्रकार हाथ में हीरा आ जाय, उसकी परीक्षा जौहरी करे, उस प्रकार समस्त जिनशासन के रहस्यरूप श्री समयसारजी हाथ में आते ही, पूर्व के संस्कारों का अपूर्व भाव उल्लसित हुआ, और इस अपूर्व परमागम शास्त्र लानेवाले भाई को श्रीमद्जी ने अंजलि भरके रुपये दिये। यह पुस्तक छपे ऐसी उनकी खास इच्छा थी। इस प्रकार १९ वर्ष पूर्व श्री समयसारजी की प्रभावना उनके द्वारा हुई। इस परमागमशास्त्र का लाभ वर्तमान में काठियावाड (प्रदेश) में काफी मात्रा में लिया जा रहा है। इस समयसारजी के कर्ता श्री कुंदकुंदाचार्य दिगंबर (नग्न) महासमर्थ मुनि थे। वे इस काल में स्वयं महाविदेहक्षेत्र में, साक्षात् त्रिलोकनाथ सर्वज्ञ भगवान सीमंधर प्रभु के पास गये थे, वहाँ उन्होंने आठ दिन तक समोवसरण (धर्मसभा) में भगवान की वाणी सुनी। वहाँ से आकर समयसारग्रंथ की श्लोकबद्ध रचना की, उस समयसार शास्त्र की इस काल में प्रथम प्रसिद्धि करनेवाले श्रीमद् राजचंद्रजी हैं, अतः उनका अनंत उपकार है। इसका लाभ वर्तमान में बहुत से भाई-बहिन ले रहे हैं, यह श्रीमद्जी का ही उपकार है। वर्तमान में उसकी दो हजार प्रती गुजराती में छप रही हैं। इसका लाभ लेनेवाले के लिये भी श्रीमद्जी ही उपकारी माने जायेंगे। (पृष्ठ संख्या-४६९)

*

('आत्मसिद्धिशास्त्र' पर पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन में से)

ऐसा उत्तम योग फिर कब मिलेगा ! निगोदमेंसे निकलकर त्रसपर्याय पाना - यह चिन्तामणि तुल्य दुर्लभ है; तो नर-भव पाना, जैनधर्म मिलना तो महा दुर्लभ है । धन और कीर्ति मिलना यह कोई दुर्लभ नहीं है । ऐसा उत्तमयोग मिला है - यह अधिक समय तक नहीं रहेगा; अतः बिजलीकी क्षणीक कौंदमें मोती-पिरो लेना ही योग्य है । ऐसा योग फिर कहाँ मिलेगा ? अतः तूँ मिथ्यात्वको छोड़नेके लिए एक बार आत्मोत्सर्ग-सम प्रयत्न कर । दुनियाके मान-सन्मान और पैसेकी महिमा छोड़कर दुनिया क्या कहेगी उसका लक्ष्य छोड़कर, मिथ्यात्वको त्यागनेका एक बार मरण-तुल्य प्रयत्न कर । ४८७

- पूज्य गुरुदेवश्री

(परमागमसार-४८७)

शिक्षापाठ ६७

अमूल्य तत्त्वविचार

(हरिगीत छंद)

बहु पुण्यकेरा पुंजथी शुभ देह मानवनो मळ्यो,
तोये अरे! भवचक्रनो आंटो नहि अक्के टळ्यो;
सुख प्राप्त करतां सुख टळे छे लेश ए लक्षे लहो,
क्षण क्षण भयंकर भावमरणे कां अहो राची रहो ? ।।१।।
लक्ष्मी अने अधिकार वधतां, शुं वध्युं ते तो कहो?
शु कुटुंब के परिवारथी वधवापणुं, ए नय ग्रहो;
वधवापणुं संसारनुं नर देहने हारी जवो,
एनो विचार नही अहोहो! एक पळ तमने हवो!!! ।।२।।
निर्दोष सुख निर्दोष आनंद, ल्यो गमे त्यांथी भले,
ए दिव्य शक्तिमान जेथी जंजीरेथी नीकळे!!
परवस्तुमा नहि मूँझवो, एनी दया मुजने रही,
ए त्यागवा सिद्धांत के पश्चात्दुःख ते सुख नहीं। ।।३।।
हुं कोण छुं? क्यांथी थयो? शु स्वरूप छे मारुं खरुं?
कोना संबंधे वळगणा छे? राखु के ए परहरुं?
एना विचार विवेकपूर्वक शांत भावे जो कर्या,
तो सर्व आत्मिक ज्ञाननां सिद्धांततत्त्व अनुभव्यां। ।।४।।
ते प्राप्त करवा वचन कोनुं सत्य केवळ मानवुं?
निर्दोष नरनुं कथन मानो 'तेह' जेणे अनुभव्युं;
रे! आत्म तारो! आत्म तारो! शीघ्र एने ओळखो;
सर्वात्ममां समदृष्टि द्यो आ वचनने हृदये लखो। ।।५।।

('श्रीमद् राजचंद्र' में से साभार उद्धुत)

पत्रांक - २६६

(दोहरा)

जड भावे जड परिणमे, चेतन चेतेन भाव।
कोई कोई पलटे नहीं, छोडी आप स्वभाव।।१।।
जड ते जड त्रण काळमां, चेतन चेतन तेम।
प्रगट अनुभवरूप छे, संशय तेमां केम?।।२।।
जो जड छे त्रण काळमां, चेतन चेतन होय।
बन्ध मोक्ष तो नहि घटे, निवृत्ति प्रवृत्ति न्होय।।३।।
बंध मोक्ष संयोगथी, ज्यां लग आत्म अभान।
पण नहि त्याग स्वभावनो, भाखे जिन भगवान।।४।।
वर्ते बंध प्रसंगमां, ते निज पद अज्ञान।
पण जडता नहि आत्मने, ए सिद्धांत प्रमाण।।५।।
ग्रहे अरूपी रूपीने, ए अचरजनी वात।
जीव बंधन जाणे नहीं, केवो जिन सिद्धांत।।६।।
प्रथम देह दृष्टि हती, तेथी भास्यो देह।
हवे दृष्टि थई आत्ममां, गयो देहथी नेह।।७।।
जड चेतन संयोग आ, खाण अनादि अनन्त।
कोई न कर्ता तेहनो, भाखे जिन भगवन्त।।८।।
मूळ द्रव्य उत्पन्न नहि, नहीं नाश पण तेम।
अनुभवथी ते सिद्ध छे, भाखे जिनवर एम।।९।।
होय तेहनो नाश नहि, नहीं तेह नहि होय।
एक समय ते सौ समय, भेद अवस्था जोय।।१०।।

('श्रीमद् राजचंद्र' में से साभार उद्धुत)

एक आश्चर्यकी प्रतिमा- श्रीमद् राजचंद्र!!

(उनकी जन्मजयंती पर पूज्य भाईश्री द्वारा गुणानुवाद)

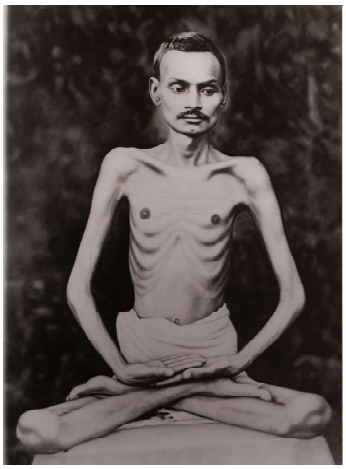

आज १२० साल पूरे हुए। २०४४ चल रहा है, अतः १२० साल हुए। १९२० वीं शताब्दिमें महाप्रज्ञावंत, जिनका ज्ञानका उघाड विशेषरूपसे निर्मल था, और जिनके वचन केवल पत्रके रूपमें उपलब्ध रह गये तो भी हज़ारों जीवोंको आकर्षित किया, जो कि वर्तमान परम्परा और संप्रदायसे इनका कहा गया विषय बिलकुल अलग है। वह इसप्रकार कि, किसी भी बाह्य क्रिया मन, वचन, काया और संयम आदि की बाह्य क्रिया या शास्त्रवांचन इत्यादि बाह्य क्रिया-इन सबसे अंतरंग परिणमनका विषय अलग चीज़ है (जिसकी ओर) बहुत अच्छीतरह ध्यान खींचा है। चौबीसवें वर्षमें जो काव्य लिखा है - 'यम, नियम, संयम आप कियो; पुनि त्याग विराग अथाग लह्यो' इसमें सारीकी सारी बातें ले ली हैं। त्यागकी, संयमकी, ध्यानकी, पूजाकी, शास्त्रवांचनकी सब बातें ले ली हैं।

बाह्य जीव अनादिसे इस मार्गसे अनभिज्ञ हैं। जैसे अंध मनुष्य देख नहीं सकता, जैसे अंधेको किस दिशामें चलना यह बहुत मुश्किलसे कोई बतायें तब पता चलता है। ऐसी स्थिति अनादि मिथ्यादृष्टिकी है। अतः अनन्त-अनन्त दुःखी है। त्रस पर्यायका तो बहुत मर्यादित काल है। परिभ्रमण कर रहे जीवका अनन्तकाल तो निगोदमें ही जाता है। निगोदमें जाना अर्थात् अनन्त दुःखमें जाता है। ऐसी परिस्थितिको देखते हुए निष्कारण करुणासे जिन्हें कोई अपेक्षा नहीं, जिन्हें कोई अंतरंग स्पृहा नहीं है उन्होंने आत्महितका मार्ग दिखाया है, दर्शाया है, अच्छीतरह बतलाया है।

पूर्वके आराधक जीव हैं। वर्तमानमें तीव्र पुरुषार्थ किया है। बहुत अल्प ३३ सालकी आयु लेकर आये थे। जन्मसे गिने तो ३३ साल और ५ महीने पर उनका देहांत हुआ। इतने अल्प समयमें आगे सिर्फ एक भव शेष बचे ऐसा तीव्रतम पुरुषार्थ उन्होंने किया।

'श्रीमद राजचंद्रजी'की आज जन्मजयंती है न! बहुत निर्मल परिणति लेकर वैमानिकदेवमें गये हैं। वहाँसे मनुष्यक्षेत्रमें आकर चरम शरीर अवधारणकर निर्वाणपदको प्राप्त होंगे। मुनिदशा अंगीकार करके, संपूर्ण चारित्रकी सिद्धि करके निर्वाणपदको प्राप्त होंगे। अपने निर्मलज्ञानमें उन्हें ऐसा अवभासित

हुआ है। एक अंगत काव्यमें इस बातकी प्रसिद्धि की है। 'धरीने एक ज देह जाशुं स्वरूप स्वदेश' अतः वर्तमान मुमुक्षु समाज पर, हज़ारों लोगों पर उनका उपकार वर्तता है।

जो आत्मभाव शब्दों द्वारा इनके पत्रोंमें प्रसिद्धि हुए हैं इनसे हज़ारों जीवों पर उपकार हुआ है। इन सौ सालमें तो बहुत लोगोंकी आयु पूर्ण हुई परन्तु नये-नये भी बहुतसे जीव इनका अनुसरण करने हेतु आते हैं। यह दुनिया तो आने-जानेवालोंका मेला है, कोई शाश्वत तो है नहीं, पुराने चले जाते हैं, नये आते हैं। शासनके पुण्य अनुसार यह सब बनता है। क्वचित किसी विरल जीवको चोट लगती है और आत्मप्राप्ति कर लेता है। उसके लिये आत्मज्ञानका एक सामान्य निमित्त बन जाता है (और) उसका बेड़ा पार हो जाता है। कभी ऐसा नहीं बनता कि संप्रदायमें आये हुए सभी जीवोंका मोक्ष हो जाये। ऐसा तो तीर्थंकरकी उपस्थितिमें भी नहीं बना, बनना संभव भी नहीं है। बहुत अल्प जीव मोक्षमार्गको प्राप्त होते हैं किन्तु संख्याकी इसमें कीमत नहीं है, जो प्राप्ति कर लेता है इसीकी बहुत बड़ी कीमत है, वही बहुत बड़ी बात है।

अतः आजके दिनके उपलक्ष्यमें यह इनके निर्मल ज्ञानका, निर्मल दर्शनका, उनकी स्वतंत्र पुरुषार्थकी योग्यताको स्मरण करनेका यह दिन है। जिन्हें ज्ञानीकी पहचान है उन्हें तो 'ज्ञानी' ऐसा कहते ही पूरा इनका रूप भावमें आ जाता है; जैसे 'सोने'की जिसको पहचान है उसे 'सोना' कहते ही इसका विस्तार करनेकी जरूरत नहीं पड़ती कि उसमेंसे गहने बनते हैं, रंगमें पीला होता है, और चमक होती है - ऐसी आवश्यकता नहीं पड़ती नाम सुनते ही जैसे इसकी कीमत लक्ष्यगत् हो जाती है। ऐसे किसी भी ज्ञानीका नाम सुनते ही इनकी महिमा और मूल्य समझमें आ जाता है।

गृहस्थदशामें यदि कोई विशेष भावना व्यक्त की है तो वह 'अपूर्व अवसर' काव्य है। अभी-अभी पुस्तक किसी मुमुक्षुने प्रकाशित किया है। 'वैराग्य भावना'में पीछे अपूर्व अवसरके प्रवचन लिये हैं। ७९ वीं सालमें 'गुरुदेवश्री'के प्रवचन हुए हैं। बहुत पुराने शुरू-शुरूके प्रवचन हैं। उसवक्तकी शैली भी थोड़ी अलग दिखती है। बार-बार ऐसा कहा है कि, गृहस्थदशामें ऐसे भाव तो कोई लाकर दिखाओ!! अरे! अभी तो गृहस्थदशा क्या अभी जो साधुवेशमें हैं उनके भी ऐसे भाव नहीं देखे जाते। जबकि श्रीमद्जीको जवाहरातका व्यापार करते करते ऐसे परिणाम हुए हैं!! अंतरंगमें-कितनी रसयुक्त भावना होगी कि जो सहज काव्यके रूपमें प्रवाहित होकर निकली!! उनके भावोंमें कितनी भावना रही होगी!! विचारणीय विषय है!

अतः तात्पर्य ऐसा है कि, जिनको ज्ञानी होना है और जो ज्ञानी हुए हैं उन्हें ऐसे भाव होते हैं। किसीके प्रदर्शित होते हैं तो किसीके प्रदर्शित भले ही न हुए हों किन्तु उस दशामें यही भावना ऐसी ही भावना होती है और ऐसा भावनावान ही उस दशाको प्राप्त होते हैं। यह बात भी इसमें से स्पष्ट होती है, प्रसिद्ध होती है। वह विषय असाधारण लिया है। मेरी मुनिदशा ऐसी हो! मेरा समभाव ऐसा हो। क्रोध-मान-माया-लोभ संबंधित मेरी प्रवर्तना ऐसी हो! उस दशासे आगे बढ़ते

हुए एक-एक गुणस्थान आरुढ़ होते हुए अरिहंतदशा तककी प्राप्ति करके शैलेषीकरणकी आखिरी अवस्थासे गुज़रकर आगे मोक्षमें चला जाऊँ! जिसमें अनन्त पुरुषार्थ होता है और अभी इतना पुरुषार्थ तो नहीं वर्तता है किन्तु वह मेरा मनोरथका विषय है - ऐसे करके भावनामें आये हैं। इस दृष्टिसे देखें तो उनका अनूठा स्थान है। अनूठा स्थान है उनका।

चलता विषय लें, चलता अधिकार है 'बहिनश्रीके वचनामृत' ग्रंथमें बोल-२१३, पन्ना ८४ है।

मुमुक्षुः- ऐसे महापुरुषका स्मरण करनेमें हमारा क्या प्रयोजन होना चाहिये?

पू. भाईश्रीः- सर्वप्रथम तो ऐसी महानता, ऐसे गुण, ऐसी दशा प्राप्त करनेकी भावना होगी। उनके स्मरणके निमित्तसे वैसी दशा मुझे भी प्राप्त हो ऐसी भावना होगी। और उन्होंने जो कहा है, उनका जो सत्स्वरूप संबंधित उपदेश है और सत्की प्राप्ति संबंधित जो मार्गदर्शन है उस पर उपयोग जायेगा, मुख्यरूपसे ज्ञानकी प्रवृत्ति होगी, केवल बहुमानका राग करके निष्क्रिय रहनेकी बात नहीं है अपितु ज्ञानकी प्रवृत्ति हो- यह बात मुख्य है।

हित-अहितकी दृष्टिसे सोचा जाये तो सत्पुरुषके गुणगान हैं वे अपने दर्शनमोहके रसको टूटनेमें, गलनेमें कारणभूत हैं। अतः इनका गुणग्राम चाहे जन्मदिन या किसी भी बहाने किया जाये तो ऐसी भावनासे खुदका दर्शनमोह भी कम होता है। अतःएव उन्होंने जहाँपर भी किसी वक्ता या वांचनकारको मार्गदर्शन दिया है वहाँपर ऐसा कहा है कि, अभी जबतक सम्यक्दर्शन और सम्यक्ज्ञान प्रगट नहीं है वहाँ तक तेरा ज्ञान पारमार्थिक विषयको यानी निजस्वरूपको स्पर्श नहीं कर पाया है और उस विषयसे अभी तुम अनभिज्ञ हो, अब जिस विषयसे तुम अनभिज्ञ हो उस विषयमें तुम क्या करोगे? मानों शास्त्रमें पढ़ी हुई या किसी सत्पुरुषकी बात धारणामें रखकर कहेगा तो ऐसी बात तुम दूसरोंको कैसे बतायेगा? जो चीज़ तुमने नहीं देखी वह दूसरोंको कैसे दिखायेगा? यह तो स्पष्ट स्थिति है। केवल धारणाका कोई अस्तित्व नहीं, वस्तु नहीं है। अब आत्मज्ञान होनेके पूर्व यदि शास्त्रवांचनका अगर बाहरमें उदय हो तो ऐसे जीवको क्या करना? कि ऐसे जीवको मुख्यरूपसे सत्पुरुषके गुणग्राम करना, ऐसा मार्गदर्शन दिया है। भक्तिकी आदत ड़ाल देनेंकी बात नहीं है, वह दर्शनमोहका क्षीण करनेका प्रयोजन है इसके पीछे, तत्वकी बात है इसमें। ऐसा कहनेके पीछे दिमाग न लगाकर भक्तिकी आदत डाल देनेकी बात नहीं है नाहि किसीको व्यक्तिपूजामें लगानेका आशय है। अपितु ऐसे सत्पुरुषके गुणग्राम करनेसे वास्तवमें दर्शनमोह कमजोर होता है - ऐसा समझकर इसके पीछे वह परमार्थ छुपा है। यह बात उन्होंने गूढ़ रखी है।

पत्रांक ७५१में तो उन्होंने यह बातको स्पष्ट किया है। सम्यक्दर्शनका कारण लिया है। पात्रतामें भी, पात्रताका मुख्य विषय लिया है। बारिकीसे अभ्यास करे तो बहुत-सी जगहसे यह बात निकलती है। यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि, दर्शनमोहका रस गले, इसकी शक्ति हीन हो, रसका गलना मतलब दर्शनमोहकी - मिथ्यात्वकी, मिथ्यात्व कर्मकी और मिथ्यात्व परिणाम दोनोंकी बात है। इसकी

शक्ति क्षीण होनेपर जीवको वर्तमान ज्ञानमें स्परूप निश्चय करने हेतु जैसी योग्यता चाहिये जैसी निर्मलता चाहिये, जो क्षमता चाहिये इसकी प्राप्ति होती है। दर्शनमोहकी तीव्रता हो तब स्वरूप निश्चय नहीं हो सकता जो कि सम्यक् सन्मुखताका कारण है। वह यहाँ सम्भव होता है, दर्शनमोह क्षीण होने पर स्वरूप निश्चय होता है। इसी वजहसे ज्ञानीका संग करनेवाला, ज्ञानीके चरणमें रहनेवाला शीघ्रतासे प्राप्ति कर लेता है इसका कारण वह है कि इसका दर्शनमोह क्षीण हुआ है, वह उसका कारण है।

'गुरुदेवश्री'ने स्वयंने मार्गदर्शन तो दिया है। 'धन्य अवतार' पुस्तिकामें (पू. बहिनश्रीके विषयमें) इस विषय पर बहुत स्पष्टरूपसे, बहुत महत्वपूर्ण ज़ोर देकर विषयको स्थापित किया है उन्होंने। भले ही कारण-कार्यकी चर्चा वहाँ न की हो परन्तु आदेश कहो, फ़रमान कहो, आज्ञा कहो जो भी कहो वह स्पष्ट बात है।

(प्रवचनांश -'बहिनश्रीके वचनामृत', प्रवचन क्र.-१७२, शुरुआतमें)

करुणासागर 'पूज्य भाईश्री शशीभाई' के ९२वीं जन्म-जयंती महोत्सव पर धार्मिक कार्यक्रम

मुमुक्षुजीवों के परम तारणहार पूज्य भाईश्री शशीभाई का आगामी ९२वीं जन्म जयंती महोत्सव मार्गशीर्ष सुदी-३, दि. ०४-१२-२०२४ से मार्गशीर्ष सुदी-८, दि. ०८-१२-२०२४ पर्यंत अत्यंत आनंदोल्लासपूर्वक मनाया जायेगा। इस प्रसंग पर मंडल विधान पूजन, पूज्य भाईश्री के ऑडियो एवं विडीयो सी.डी. प्रवचन, पूज्य गुरुदेवश्री के विडीयो सी.डी. प्रवचन, पूज्य बहिनश्री चंपाबहिन की तत्त्वचर्चा, भक्ति, सत्संग, सांस्कृतिक कार्यक्रम रहेंगे और दि. ०७-१२-२०२४ के दिन जिनेन्द्र रथयात्रा का कार्यक्रम रहेगा। इस प्रसंग पर आनेवाले मुमुक्षु निम्नलिखित पते पर पहुँचने की तारीख लिखें, जिससे उनकी आवास एवं भोजन की समुचित व्यवस्था हो सके।

संपर्क: श्री राजेन्द्र जैन, मो. ९८२५१५५०६६

कार्यक्रम स्थल :- श्री शशीप्रभु साधना-स्मृति मंदिर, प्लोट नं. १९४२-बी, शशीप्रभु चौक, रूपाणी सर्कल के पास, भावनगर-३६४००१

आभार

'स्वानुभूतिप्रकाश' (नवम्बर-२०२४, हिन्दी एवं गुजराती) के इस अंककी समर्पणराशि
१) श्री नीरवभाई डी. वोरा, भावनगर और
२) श्री परम हेमंतभाई शाह, मुंबई की
ओरसे ट्रस्टको साभार प्राप्त हुई है।
अतएव यह पाठकों को आत्मकल्याण हेतु भेजा जा रहा है।

वीर निर्वाणकल्याणक दिन- 'दीपावली'का महत्व

-पूज्य भाईश्री शशीभाई

आज वीर निर्वाणकल्याणक दिन है। आजका यह दिन भूतनैगमनयसे कहा जाता है। वैसे तो भगवान २५००से अधिक साल पहले सिद्धालयमें पधारे हैं। 'पावापुरीजी'से सिद्धालयमें गमन किया वह आज रोज़ प्रातःकालमें हुआ। २५०० साल पश्चात् या कितने ही कालके पश्चात् आज रोज़ ऐसा भूतनैगमनयसे कहा जाता है। आज रोज वह दिन है ऐसा कहते हैं। भूतकालमें हुई घटनाको कथन द्वारा वर्तमानवत् कहना - यह भूतनैगमनयका कथन हुआ।

भगवान महावीर चरणकमल

इसीतरह भावी घटनाको वर्तमानवत् कहना - जैसे कि 'गुरुदेवश्री'के लिये हमलोग कहते हैं कि, 'गुरुदेवश्री' 'सूर्यकीर्तिनाथ' भगवान हैं। चौबीस सागरके पश्चात् 'सूर्यकीर्ति' भगवान तो होंगे। इसे वर्तमानमें 'हैं' ऐसा करके स्थापित करते हैं यह भाविनैगमनयका विषय है।

(महावीर भगवानको) केवलज्ञान तो (निर्वाणके पूर्व) तीस वर्ष पहले हुआ था। तीस साल तक उन्होंने समवसरणमें दिव्यध्वनि प्रकाशित की और आज़के दिन सिद्धालयमें गमन किया तब इन्द्रादि देवोंने आगमन किया और उत्सव मनाया। आज ही के दिन भगवान सिद्धालय पधारें और आज ही 'गौतम गणधर स्वामी' केवलज्ञानको प्राप्त हुए। श्वेतांबरमें थोड़ी गडबडीवाली बात आती है कि, गणधर भगवान 'गौतमस्वामी'को बहुत दुःख हुआ रोने लगे। चौधार आँसूसे रुदन किया था! हालाँकि मुनिराजको ऐसे लौकिक परिणाम नहीं होते। अलबत्ता वर्तमानमें तीर्थंकर भगवानका वियोग हुआ यह पता चलता है फिर भी वह प्रसंग कल्याणका प्रसंग है। दूसरे जीवोंको अपने कल्याणमें निमित्तभूत होनेसे उसे 'कल्याणक' कहा जाता है। 'कल्याणक'का अर्थ है - कल्याण करनेवाला! जो कल्याण करे सो 'कल्याणक' कहलाये। कल्याणमें निमित्तभूत हो उसे 'कल्याणक' कहे। यह प्रसंग भी अन्य जीवोंके आत्महितमें - कल्याणमें निमित्तभूत होता है। जैसे 'गौतम' गणधरको तो उसी दिन केवलज्ञानकी प्राप्ति हुई है।

उनकी वाणीमें से ततपश्चात् अनेक आचार्य भगवंतोंने सत्शास्त्रोंकी रचना की है। इन्हीं शास्त्रोंके रहस्योंको खोजकर 'गुरुदेवश्री'ने हम सबको प्रदान किया है। वही वाणी है जो 'गुरुदेवश्री'ने प्रसिद्ध की है। 'सीमंधर भगवान'की वाणी कहो, चाहे 'महावीरस्वामी भगवान'की वाणी कहो - सब एक ही है।

कोई अलग-अलग बातें उसमें नहीं होती। एक सरीखा आत्महितका रहस्य इसमें प्रकाशित होता है। वह वाणी तो अनन्त रहस्य समेत आती है। वैसे ही 'गुरुदेवश्री'की वाणी भी सातिशय थी और उसमें भी अतिशयरूपसे - सअतिशय तत्त्वका प्रकाश हुआ है और अनेक जीवोंको आत्महितमें वह कल्याणकारी हुई है और होगी भी। ऐसा यह आजका महान दिन है! आज पर्वका दिन! निर्वाणकल्याणकका दिन! उत्सवके रूपमें मनाया जाता है।

उस जमानेमें तो जैनधर्मका वैभव बहुत था। अन्यमतियों कम थे। जब भगवान विराजमान होते हैं तब तीर्थप्रवृत्ति इतने विशाल पैमानेमें होती है कि दूसरे अन्यमतवाले जीव कम होते हैं। अतः वे लोग भी साथ-साथ जुड़ते हैं। सामान्य तौर पर ऊँचे पुण्यवालोंके साथ नीचे पुण्यवाले जुड़ जाते हैं। क्योंकि उनका भी कोई मतलब होता है इसलिये। अतः सब लोग इन दिनों, स्वयं इन्द्रोंने भी आकर दिये जलायें! निर्वाणकल्याणक दिन पर दीपमालाएँ प्रगटाई इसलिये दीपावली कहते हैं। मूल शब्द तो 'दीपावली' है। आवली अर्थात् समूह। इतने सारे दियोंका समूह था कि, इस दिनको 'दीपावली महोत्सव' कहा गया। इसमें से अपभ्रंश होकर 'दिवाली' हो गया। और भीतरमें आत्माके असंख्य प्रदेशमें ज्ञानके दिये प्रकट होते हैं वह सम्यक्त्वरूप दीपावली है! स्वसंवेदनरूप दीपावली है!! 'गौतम गणधर भगवान'ने केवलज्ञानरूप दीपावली मनायी! दूसरे अनेक जीवोंने सम्यक्त्वादि प्राप्त करके असंख्य प्रदेशोंमें ज्ञानकी दीपावली मनायी। जो कि वास्तवमें दीपावली है। इस तरह सच्ची दीपावली तो वह है। ये जो पटाखे फोड़ते हैं वह दीपावली नहीं है। वह तो हिंसाका कारण है। अनेक जीव वातावरणमें होते हैं जो इसकी गंधमात्रसे मर जाते हैं। फिर आम लोग दीपावलीके साथ इसे जोड़ देते हैं।

वैसे तो देवोंने इन्द्रोंने आकर अनेक दिये उस अवसर पर प्रज्वलित किये थे और साधकोंने अंतरमें ज्ञान-दिये प्रज्वलित किये थे!! इसलिये इस अवसर को दीपावलीके उत्सवके रूपमें आज २५०० साल पश्चात् भी मनाया जाता है। इसतरह आजका दिन महान है।

*

(प्रवचनांश...श्री 'अध्यात्मसुधा भाग-१' पन्ना क्र. - १)

(पृष्ठ संख्या १४ से आगे..)

अद्भुत रीतिसे प्रकाशित किया है।

वर्तमानमें श्री कहानगुरुदेव शास्त्रोंके सूक्ष्म रहस्य खोलकर मुक्तिका मार्ग स्पष्ट रीतिसे समझा रहे हैं। उन्होंने अपने सातिशय ज्ञान एवं वाणी द्वारा तत्त्वका प्रकाशन करके भारतको जागृत किया है। गुरुदेवका अमाप उपकार है। इस कालमें ऐसे मार्ग समझानेवाले गुरुदेव मिले वह अहोभाग्य है। सातिशय गुणरत्नोंसे भरपूर गुरुदेवकी महिमा और उनके चरणकमलकी भक्ति अहोनिश अंतरमें रहो। (४३२)

('बहिनश्रीके वचनामृत'मे से साभार उद्धुत)

वीर निर्वाणकल्याणक दिन पर प्रवाहित पूज्य बहिनश्रीके हृदयोद्गार!!

प्रश्नः- आज वीरनिर्वाणदिनके प्रसंग पर कृपया दो शब्द कहिये।

उत्तरः- श्री महावीर तीर्थाधिनाथ आत्माके पूर्ण अलौकिक आनन्दमें और केवलज्ञानमें परिणमते थे। आज उनने सिद्धदशा प्राप्त की। चैतन्यशरीरी भगवान आज पूर्ण अकम्प होकर अयोगीपदको प्राप्त हुए, चैतन्यपिण्ड पृथक् हो गया, स्वयं पूर्ण चिद्रूप होकर चैतन्यबिंबरूपसे सिद्धालयमें बिराज गये; अब सदा समाधिसुख-आदि अनन्तगुणोंमें परिणमन करते रहेंगे। आज भरतक्षेत्रसे त्रिलोकीनाथ चले गये, तीर्थंकरभगवानका वियोग हुआ, वीरप्रभुका आज विरह पड़ा। इन्द्रोंने ऊपरसे उतरकर आज निर्वाणमहोत्सव मनाया। देवों द्वारा मनाया गया वह निर्वाणकल्याणकमहोत्सव कैसा दिव्य होगा! उसका अनुसरण करके आज भी लोग प्रतिवर्ष दिवालीके दिन दीपमाला प्रज्वलित करके दिपावलीमहोत्सव मनाते हैं।

आज वीरप्रभु मोक्ष पधारे। गणधरदेव श्री गौतमस्वामी तुरन्त ही अंतरमें गहरे उतर गये और वीतरागदशा प्राप्त करके केवलज्ञान प्राप्त किया। आत्माके स्वक्षेत्रमें रहकर लौकालोकको जाननेवाला आश्चर्यकारी, स्वपरप्रकाशक प्रत्यक्षज्ञान उन्हें प्रगट हुआ, आत्माके असंख्य प्रदेशोंमें आनन्दादि अनन्त गुणोंकी अनन्त पूर्ण पर्यायें प्रकाशमान हो उठीं।

अभी इस पंचम कालमें भरतक्षेत्रमें तिर्थंकर भगवानका विरह है, केवलज्ञानी भी नहीं हैं। महाविदेहक्षेत्रमें कभी तीर्थंकरका विरह नहीं होता, सदैव धर्मकाल वर्तता है। आज भी वहाँ भिन्न-भिन्न विभागोंमें एक-एक तीर्थंकर मिलाकर बीस तीर्थंकर विद्यमान हैं। वर्तमानमें विदेहक्षेत्रके पुष्कलावतीविजयमें श्री सीमंधरनाथ विचर रहे हैं और समवसरणमें बिराजकर दिव्यध्वनिके स्त्रोत बहा रहे हैं। इसप्रकार अन्य विभागोंमें अन्य तीर्थंकरभगवन्त विचर रहे हैं।

यद्यपि वीरभगवान निर्वाण पधारे हैं तथापि इस पंचम कालमें इस भरतक्षेत्रमें वीरभगवानका शासन प्रवर्त रहा है, उनका उपकार वर्त रहा है। वीरप्रभुके शासनमें अनेक समर्थ आचार्यभगवान हुए जिन्होंने वीरभगवानकी वाणीके रहस्यको विविध प्रकारसे शास्त्रोंमें भर दिया है। श्री कुन्दकुन्दादि समर्थ आचार्यभगवंतोंने दिव्यध्वनिके गहन रहस्योंसे भरपूर परमागमोंकी रचना करके मुक्तिका मार्ग

(अनुसंधान पृष्ठ संख्या १३ पर..)

'द्रव्यद्रष्टि प्रकाश'मे से 'मार्गदर्शन' संबंधित पूज्य निहालचंद्रजी सोगानीजीके वचनामृत

प्रश्न :- अनुभव होनेके बाद परिणाम में मर्यादा आ जाती है न? विवेक हो जाता है न?

उत्तर :- विवेक की बात एकबाजू रखो; एकदफा विवेक को छोड़ दो! (- पर्याय की सावधानी छोड़ दो!) परिणाम मात्र ही 'मैं' नहीं; 'मैं' तो अविचलित खूँटा हूँ; मेरे में क्षणिक अस्तित्व है ही नहीं। विवेक के बहाने भी जीव परिणाम में एकत्व करते हैं। (६८)

*

विचार-मंथन भी थक जायें, शून्य हो जायें; तब अनुभव होता है। मन्थन भी तो आकुलता है। एकदम तीव्र धगश से (ज़ोर से) अन्दर में उतर जाना चाहिए। (७२)

*

बस, एक ही बात है कि 'मैं त्रिकाली हूँ' - ऐसे जमे रहना चाहिए। पर्याय होनेवाली हो सो योग्यतानुसार हो जाती है, 'मैं' उसमें नहीं जाता। क्षयोपशम हो, न हो; याद रहे, न रहे; परंतु असंख्य प्रदेश में, प्रदेश-प्रदेश में व्यापक हो जाना चाहिए। (८१)

*

'कुछ करे नहीं तो गमे नहीं' ऐसी आदत (कर्ताबुद्धि) हो गयी है। लेकिन 'कुछ करे तो गमे नहीं' ऐसा होना चाहिए। (८४)

*

जहाँ तक अंदर में (आत्मा में) डुबकी नहीं मारता, वहाँ तक प्रयत्न चालू रखना चाहिए। (८६)

*

असल में बात तो यह है कि सुनने में जो महात्म्य आता है - वह नहीं, किन्तु अन्दर से सहजरूप से (स्व का) महात्म्य आना चाहिए। (बाहर में) तीव्र थकावट हो तो महात्म्य अन्दर से ही आता है। (१०२)

*

श्रवण-वांचन आदि तो सब ऊपर-ऊपर की बातें हैं; अंदरमें से सहजरूप (भाव) आना चाहिए। (१०४)

*

सुखप्राप्तिका एकमात्र उपाय - भेदज्ञान!!

- पूज्य भाईश्री शशीभाई

अनादिकालसे राग एवम् रागके विषयमें ममत्व किया है और वर्तमानमें भी ऐसा ही कर रहा है इसलिये ममत्व छोड़ना कठिन लगता है। अपितु वास्तविकताका विचार करे तो ममत्वमें दुःख और आकुलता है और इससे छूटने पर सुख और शांति है। भेदज्ञान करनेमें कोई दुःख नहीं है अपितु भेदज्ञान करनेसे सुख है। परन्तु ममत्व बहुत किया है, बहुत रसपूर्वक किया है और अनन्तकालसे किया है इसलिये जब-जब जिस पदार्थ पर हमने ममत्व किया है उन पदार्थोंके वियोग होनेपर (वास्तवमें) भावसे भिन्न होनेपर, क्योंकि द्रव्यसे तो भिन्न हैं ही, अपितु भावसे भिन्न होते समय दुःख होता है कि, क्या ये सबकुछ मेरा नहीं है? क्या मुझे इन सबके प्रति अपनत्वका लगाव छोड़ देना पडेगा? ऐसी व्यथा होती है। जबकि ऐसे अपनत्व करनेसे मुझे दुःख होता है या सुख होता है इसका हमने कभी यथार्थ विचार नहीं किया।

अपनत्वकी मिठासमें दुःख होनेपर भी सुख माना है और वास्तवमें इससे भिन्नता करनेसे सुख है परन्तु जीवको लगता है कि, क्या ये सब मेरा छूट जायेगा तो? इससे अपनत्व छूट जायेगा तो क्या होगा? परन्तु यह भय झूठा है। ऐसा भय रखने योग्य नही है। तू अपनत्व कर तो भी वह जगतका पदार्थ भिन्न है और जो वास्तवमें है ऐसे भिन्नता जानेगा तो भी पदार्थ तो जो भिन्न है सो भिन्न ही है। तेरे मानने - नहीं माननेसे कोई फ़र्क नहीं पड़ता।

मुमुक्षुः- क्या यह मेरा है ऐसी सिर्फ कल्पना है?

पूज्य भाईश्रीः- मात्र कल्पना है, केवल कल्पना है, झूठी कल्पना है। हमने अविद्यासे झूठा आनन्द मान रखा है - 'अनुभवप्रकाश'में ऐसा लिया है कि, अविद्यासे झूठा आनन्द मान रखा है। झूठमें आनन्दकी कल्पना की है। जैसे बालक झूठ-मूठका हसता है वैसा है। वास्तवमें आत्मामें तो कुछ आता नहीं। खुद जाँच करे तो पता चले कि ऐसे आनन्दका कोई कारण आत्माको तो छूता तक नहीं, आत्मामें प्रवेश नहीं करता है और न तो इसका आत्माके साथ संबंध होता है!

(यहाँ कहते हैं कि) ऐसी भेदज्ञानकी धारासे लगे रहे इस एक धारासे आगे बढ़े... ऐसा कहते हैं कि, भेदज्ञान सतत चलना चाहिये। क्योंकि (विपरीत) परिणमन भी सतत है

तो भेदज्ञान भी सतत होना चाहिये। ऐसी धारासे प्रवर्ते तो कार्यसिद्धि होवे यानी कि इससे सुख शांति प्राप्त हो। 'बनारसीदासजी'ने तो भेदज्ञान करनेवाले जीवोंको नमस्कार किया है। स्वयं सम्यक्दृष्टि हैं तो कहते हैं कि भेदविज्ञान जग्यो जिनके घट, शीतल चित्त भयो जिन चंदन (यानी कि) उसका चित्त तो शीतल...शीतल...शीतल हो गया। भेदज्ञानसे कोई दुःख तो नहीं पाया परन्तु भेदज्ञानसे तो परिणमनमें चित्त यानी परिणमनमें शांति हो गई। ऐसी जीवकी दशाको देखकर, उसकी शांत दशाको 'देखकर शांतदशा तिनकी पहिचानी'। पहिचान करके, किसीके कहने से नहीं, अपने आपसे पहिचान करके, 'करे कर जोडी बनारसी वंदन'। मैं 'बनारसीदास' तो उसे दो हाथ जोड़ कर नमस्कार करता हूँ, वंदन करता हूँ।

इसप्रकार एक धारासे कार्य करे तो अवश्य कार्यसिद्धि होवे 'परन्तु स्वयं गहराईमें जाता ही नहीं,...' क्या कहते हैं? यह एक गहराईमें जानेका विषय है। 'ज्ञान सो मैं हूँ' अथवा 'ज्ञायक सो मैं हूँ' ऐसे अपनी मौजूदगीको अपने अस्तित्वको व्यक्त वेदनसे पकड़ कर - ग्रहण करके वहीं पर गहराई तक जाना है। यह एकमात्र मेरा कार्यक्षेत्र है एक ही कार्यका भाव है और यहाँ से हमें हटना नहीं है।

जैसे पापसे अधिक जीव पुण्यके उदयमें फँसता है इससे भी ज्यादा फँसता है जीव ज्ञानके क्षयोपशममें, यह सबसे ज्यादा फँसनेकी जगह है। तिर्यंच प्राप्त कर लेता है इसका एक कारण यह भी है कि, उघाडके अभावमें उसका ज्ञान इधर-उधर कहीं भी रस नहीं लेने लगता। जब जीवके ज्ञानमें अधिक उघाड होता है तब वह अनेक विषयोंमें रस लेकर उलझने लगता है। अतः जीवको एक मात्र ज्ञानमें ही अपनत्व करके इसकी गहराईमें जाना चाहिये।

*

(प्रवचनांश...श्री 'अध्यात्मसुधा भाग-१' प्रवचन क्र.- १५, पन्ना क्र. - १९५)

विनम्र अपील

" स्वानुभूतिप्रकाश" मासिक पत्रिका पिछले २५ सालोंसे पूज्य भाईश्री शशीभाई की प्रेरणासे हिन्दी एवं गुजरातीमें मुमुक्षुओंको भेट दी जाती है। जिसमें किसी न किसी पात्र जीवके आत्मकल्याणकी एकमात्र विशाल भावना निहित है।

यदि इस पत्रिका का आपके वहाँ या आपके आसपासके समुदायमें सद्उपयोग न होता हो अथवा संभवित अविनय या अशातना होती नज़र आये तो हमें इसकी जानकारी अवश्य दे या फिर आप पत्रिका एड्रेस समेत हमें वापिस भेज सकते हैं, ताकि हम उसे भेजना बंद कर सके। ट्रस्टकी इस व्यवस्थामें आपका सहयोग अपेक्षित है।

आभार

संपर्क: श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट श्री नीरव वोरा मो: ९८२५०५२९१३

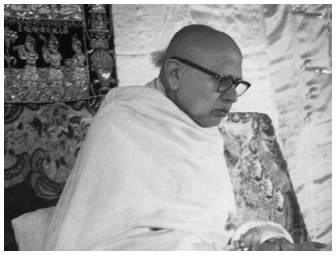

श्रीमद् राजचंद्रजी कृत **'आत्मसिद्धिशास्त्र'** के विषयमें पूज्य श्री कानजीस्वामीके भाववाही हृदयोद्गारो

गुजराती भाषामें 'आत्मसिद्धि'की अपूर्व रचना की है। सभी घरोंमें इसका प्रचार होना चाहिए। जो कहा गया है, वह बहुतसे जीवोंको उपकारका निमित्त होवे, ऐसा सरल है। भादों शुक्ला सातमसे इसके व्याख्यान (प्रवचन) शुरू किये हैं, जिसे आज ७२ दिन हुए हैं। इसमें निष्पक्षपाततापूर्वक सब कुछ कहा गया है। लोग मध्यस्थ होकर विचारपूर्वक बारम्बार इसका घोलन करे तो उन्हें आत्मख्याति (आत्मसिद्धि) हुए बिना नहीं रहे। उत्तम भोजनसे भरा हुआ थाल मिले और भूखा रह जाए, वह जीव दुर्भागी है। कई तरहसे बात कही गयी है। कुलधर्मका आग्रह इत्यादि बहुतसे विरोध मिटाकर, अविरोध तत्त्वको समझनेकी यह अपूर्व रचना निर्मित है। इसमें सरल भाषामें विस्तारपूर्वक बहुत कहा गया है। किसी धर्मी, पुण्यवन्त आत्मार्थी जीवोंके भाग्यवश यह अपूर्व योग हुआ है।

('आत्मसिद्धिशास्त्र के प्रवचन'में से पन्ना क्रमांक - ६१५)

शासननायक अंतिम तीर्थाधिनाथ श्री महावीरप्रभुके निर्वाणकल्याणकके पावन प्रसंग पर उनके चरणोंमें वंदन करके, मंगलमय सुप्रभातकी प्राप्ति करके, अनंत जन्म-मरणकी श्रृंखलाका व्यवच्छेद करनेकी मंगलमय भावनाके दीप प्रज्वलित करके स्वानुभूतिप्रकाश परिवारकी सर्व पाठकवर्गको दीपावलीकी शुभकामना !!

महावीरके बोधका पात्र कौन?

१. सत्पुरुषके चरणोंका इच्छुक,
२. सदैव सूक्ष्म बोधका अभिलाषी,
३. गुणपर प्रशस्त भाव रखनेवाला,
४. ब्रह्मव्रतमें प्रीतिमान,
५. जब स्वदोष देखे तब उसे दूर करनेका उपयोग रखनेवाला
६. एक पल भी उपयोगपूर्वक बितानेवाला,
७. एकांतवासकी प्रशंसा करनेवाला,
८. तीर्थादि प्रवासका उमंगी,
९. आहार, विहार और निहारका नियम रखनेवाला
१०. अपनी गुरुताको छिपानेवाला,

ऐसा कोई भी पुरुष महावीरके बोधका पात्र है,सम्यग्दशाका पात्र है। पहले जैसा एक भी नहीं है।

('श्रीमद् राजचंद्र' ग्रंथ पत्रांक-१०५)

REGISTERED NO. : BVHO - 253 / 2024-2026
RENEWED UPTO : 31/12/2026
R.N.I. NO. : 70640/97
Title Code : GUJHIN00241
Published : 10th of Every month at BHAV.
Posted at 10th of Every month at BHAV. RMS
Total Page : 20

'सत्पुरुषों का योगबल जगत का कल्याण करे'

... दर्शनीय स्थल...

श्री शशीप्रभु साधना स्मृति मंदिर
भावनगर

स्वत्वाधिकारी श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री राजेन्द्र जैन द्वारा अजय ऑफसेट, १२-सी, बंसीधर मिल कम्पाउन्ड, बारडोलपुरा, अहमदाबाद-३८० ००४ से मुद्रित एवम् ५८० जूनी माणिकवाडी, पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी मार्ग, भावनगर-३६४ ००१ से प्रकाशित
सम्पादक : श्री राजेन्द्र जैन -09825155066

Printed Edition : **3700**
Visit us at : http://www.satshrut.org

If undelivered please return to ...
Shri Shashiprabhu Sadhana Smruti Mandir
1942/B, Shashiprabhu Marg, Rupani,
Bhavnagar - 364 001

mayur printers 9374825041